रिपोर्टेबल

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

सिविल अपील संख्या 1039/2019

(एस एल पी (सी) संख्या 22809/2016 से उत्पन्न)

राजस्थान लघु उद्योग कॉर्पोरेशन लिमिटेड – अपीलकर्ता

बनाम

मैसर्स गणेश कंटेनर्स मूवर्स सिंडिकेट – प्रत्यर्थी

निर्णय

आर. बानुमथि, न्यायाधीश

1. अनुमति दी गई।

2. यह अपील राजस्थान उच्च न्यायालय, पीठ जयपुर द्वारा दिनांक 22.04.2016 को पारित निर्णय से उत्पन्न होती है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 और धारा 15 के तहत प्रत्यर्थी द्वारा दायर आवेदन को स्वीकार किया है और जिसके चलते श्री जे. पी. बंसल, सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश को पक्षकारों के बीच विवाद को हल करने के लिए एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया है।

3. संक्षिप्त तथ्य जिनके कारण इस अपील को दाखिल किया गया, निम्नानुसार हैः

अपीलकर्ता–राजस्थान लघु उद्योग निगम लिमिटेड ने अंतर्देशीय कंटेनर डिपो जयपुर, जोधपुर और बंदरगाह के बीच में आईएसओ कंटेनरों और माल के संचालन और सड़क परिवहन के लिए निविदा आमंत्रित की। प्रतिवादी–ठेकेदार ने कथित निविदा में भाग लिया और 21.01.2000 को प्रतिवादी–ठेकेदार के पक्ष में आशय पत्र जारी किया गया। दोनों पक्षों के बीच समझौता 28.01.2000 को निष्पादित किया गया था। शुरुआत में यह अनुबंध तीन साल का था, लेकिन दोनों पक्षों की सहमति से इसे 31 जनवरी, 2003 से दो साल के लिए बढ़ा दिया गया। अपीलकर्ता द्वारा प्रत्यर्थी पर कंटेनरों के परिवहन में देरी के लिए ट्रांजिट जुर्माना लगाने, विभिन्न अवधि के लिए कंटेनरों के संचालन शुल्क का भुगतान न करने, और कई अन्य विवादों के लिए पक्षकारों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ। अनुबंध की शर्तें–धारा 4.2.1 अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) के तहत एकमात्र मध्यस्थता के लिए स्वयं प्रबंध निदेशक या उसके द्वारा नामित व्यक्ति द्वारा मध्यस्थता का प्रावधान किया गया है। प्रतिवादी–ठेकेदार ने धारा 4.2.1 अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) के संदर्भ में मध्यस्थ की नियुक्ति का अनुरोध किया। एक आईएएस (सेवानिवृत्त) आई सी श्रीवास्तव को 21.02.2005 को एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किया गया। चूंकि मामले को निपटाने में एकमात्र मध्यस्थ की प्रगति संतोषजनक नहीं थी, इसलिए उक्त एकमात्र मध्यस्थ को 26.03.2009 को हटा दिया गया और उसके स्थान पर, अपीलकर्ता–निगम के अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक को दोनों पक्षों की सहमति से एकमात्र मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त किया गया।

4. किसी न किसी कारण से मध्यस्थता की कार्यवाही पूरी नहीं हो सकी। अपीलकर्ता के अनुसार, मामले को मध्यस्थ न्यायाधिकरण के दिनांक

10.02.2010, 11.02.2010, 15.02.2010, 18.02.2010 और 10.03.2010 के आदेशों द्वारा बार–बार स्थगित किया गया क्योंकि प्रतिवादी–ठेकेदार की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ था। 16 मार्च, 2010 को, प्रत्यर्थी ने नवनियुक्त एकमात्र मध्यस्थ की निष्पक्षता के बारे में अपना संदेह व्यक्त किया। एकमात्र मध्यस्थ ने दिनांक 06.04.2010 को यह कहते हुए आदेश पारित किया कि समझौते की धारा 4.2.1 अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) में निगम के अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक या उनके द्वारा नामित व्यक्ति द्वारा मध्यस्थता का प्रावधान है और यह कि केवल दोनों पक्षों के संयुक्त अनुरोध पर, अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक ने पक्षकारों के बीच विवाद को सुलझाने के लिए मध्यस्थता का मामला उठाया है।

कार्यवाही आगे भी जारी रही, 17.08.2011 तक सुनवाई की तारीख विभिन्न तिथियों पर नियत की गई।

5. 07.02.2013 को, प्रत्यर्थी–ठेकेदार ने अपीलकर्ता को एक कानूनी नोटिस भेजा जिसमें कहा गया था कि इतने सारे अनुरोधों के बाद भी, एकमात्र मध्यस्थ ने निर्णय पारित नहीं किया है और अपीलकर्ता को एक महीने के भीतर वैधानिक ब्याज सहित 3,90,81,602/– रुपये की निर्णीत राशि का भुगतान करने के लिए कहा है। अपीलकर्ता ने 19 मार्च 2013 को एक जवाब भेजा जिसमें कहा गया था कि चूंकि अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक का स्थानांतरण कर दिया गया है, अधिनिर्णय पारित नहीं किया जा सका है और प्रत्यर्थी–ठेकेदार को भुगतान करने का कोई सवाल ही नहीं है।

6. 13.05.2015 को, प्रत्यर्थी–ठेकेदार ने उच्च न्यायालय के समक्ष मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की खंड 11 (6) और खंड 15 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें 28.01.2000 के समझौते के संबंध में अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी

के बीच विवाद के न्यायनिर्णयन के लिए एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग की गई। 18 दिसंबर, 2015 को मध्यस्थ के संज्ञान में लाया गया कि उच्च न्यायालय के समक्ष एक मध्यस्थता आवेदन दायर किया गया है। दिनांक 05.01.2016 को मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने पक्षकारों को सुनवाई के अंतिम अवसर के रूप में मामले को 13.01.2016 के लिए स्थगित कर दिया। 13.01.2016 को, मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी–ठेकेदार के आवेदन और उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित मध्यस्थता आवेदन की सुनवाई और अंतिम निपटान तक मामले को स्थगित करने के उनके अनुरोध को अस्वीकार कर दिया और निर्णय दिया कि मध्यस्थता की कार्यवाही को उपलब्ध तथ्यों के आधार पर अंतिम रूप दिया जाएगा और इसलिए मामले को 21.01.2016 तक स्थगित कर दिया। एकमात्र मध्यस्थ ने 21.01.2016 को एकपक्षीय निर्णय पारित किया।

7. उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा माध्यस्थम् आवेदन को अनुज्ञात किया और इस प्रकार श्री जे. पी. बंसल (सेवानिवृत्त), जिला न्यायाधीश को एकमात्र मध्यस्थता के रूप में नियुक्त किया।उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी – ठेकेदार को एकमात्र मध्यस्थ के समक्ष मामले की दीर्घीकरण के कारण उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ा, जो एक के बाद एक बदलता रहा और अपीलकर्ता–निगम पर मध्यस्थता याचिका की नोटिस की तामील होने के बाद ही मध्यस्थ ने कार्यवाही में तेजी लाई और प्रतिवादी–ठेकेदार को सुने बिना 21.01.2016 को एकपक्षीय पंचाट पारित किया गया।उच्च न्यायालय का विचार था कि मध्यस्थ ने मध्यस्थता आवेदन को विफल करने की दृष्टि से कार्यवाही को समाप्त करने के लिए जल्दबाजी की।

8. श्री ए. डी. एन. राव, अपीलार्थी–निगम के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उच्च न्यायालय ने धारा 4.20.1 अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) को ध्यान में न

रखकर गलती की, कि मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 और धारा 15 के तहत प्रत्यर्थी पक्षकारों के बीच समझौते और पक्षकारों के बीच विवाद के निर्णय के लिए मध्यस्थ न्यायाधिकरण की क्षमता को ध्यान में रखते हुए आवेदन नहीं कर सकता था। यह आगे निवेदन किया गया कि हालांकि मध्यस्थ मामले को आगे बढ़ाने के लिए तैयार था, मध्यस्थ प्रगति नहीं कर सकता था क्योंकि प्रतिवादी या तो उपस्थित नहीं था या स्थगन ले रहा था और जब मध्यस्थ मामले को सही तरीके से आगे बढ़ा रहा था, तो प्रतिवादी मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय से संपर्क नहीं कर सकता था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह आग्रह किया गया कि माध्यस्थम अधिकरण द्वारा अंतिम माध्यस्थम पंचाट पारित कर दिया गया, प्रत्यर्थी माध्यस्थम और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत अपील के माध्यम से ही इसे चुनौती दे सकता है और उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश को रद्द किया जा सकता है।

9. प्रतिवादी–ठेकेदार की विद्वान अधिवक्ता सुश्री मिश्रा ने प्रस्तुत किया कि मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की धारा 12 के मद्देनजर, यदि मध्यस्थ एक कर्मचारी/सलाहकार है या कोई अतीत या वर्तमान का व्यापार संबंध है या प्रबंधक/निदेशक है तो उसे मध्यस्थ के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता है और वह विवाद का फैसला करने के लिए योग्य नहीं है और इसलिए, उच्च न्यायालय ने उचित रूप से नए स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति की है। यह निवेदन किया गया कि मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की सातवीं अनुसूची में वर्णित मध्यस्थ का पद धारण करने के लिए व्यक्ति की अयोग्यता प्रत्यर्थी–ठेकेदार को प्रदान किया गया एक विधिक अधिकार है और यह आरोप लगाते हुए अधिनियम के खिलाफ कोई वचन–विबंध नहीं हो सकता है कि 28.01.2000 के समझौते में, प्रत्यर्थी ने सहमति व्यक्त की कि विवाद और मतभेदों को एकमात्र मध्यस्थता के लिए स्वयं प्रबंध

निदेशक या उनके नामित को संदर्भित किया जाएगा। **यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य पुल निगम लिमिटेड** (2015) 2 **एस. सी. सी. 52,** पर विश्वास जताते हुए यह प्रतिवाद किया गया था कि जब मध्यस्थ न्यायाधिकरण की ओर से कार्य करने में विफलता होती है और अपने कार्यों को करने में असमर्थ होता है, तो यह मध्यस्थता की कार्यवाही से जुड़े पक्षकार के लिए खुला होता है कि वह मध्यस्थ के निर्णय को समाप्त करने के लिए अदालत से संपर्क करे और स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग करे। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि वर्तमान मामले में, लगभग दस वर्षों की लंबी अवधि में कोई पंचाट पारित नहीं किया गया है और मध्यस्थों को किसी न किसी कारण से बदलते रखा गया था, प्रत्यर्थी द्वारा प्रतिस्थापन या नए मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना उचित था। यह निवेदन किया गया कि प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के बाद ही कार्यवाही में तेजी लाई गई और पंचाट पारित किया गया।

10. हमने दोनों पक्षों की दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और आक्षेपित निर्णय और रिकॉर्ड पर आए तथ्यों का अवलोकन किया है। निम्नलिखित बिंदुओं पर विचार किया जाना चाहिएः–

- विभिन्न तारीखों को एकमात्र मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाही के प्रकाश में और जब मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाही लंबित थी, क्या प्रतिवादी स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 11 और धारा 15 के तहत उच्च न्यायालय में मध्यस्थता याचिका दायर करने में सही था?

- जब मध्यस्थता समझौते के आधार पर अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) की धारा 4.20.1 के अधीन जब पक्षकार इस बात पर सहमत हुए कि पक्षकारों के बीच

विवाद, मतभेद प्रबंध निदेशक या उनके द्वारा नामित के द्वारा सुलझाया जाना चाहिए, क्या उच्च न्यायालय पक्षकारों के बीच समझौते की शर्तों से विचलित होकर एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति करने में सही था?

- क्या मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की धारा 12 के आधार पर अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए अयोग्य हैं?

- क्या उच्च न्यायालय पंचाट पारित करने में हुए विलंब के आधार पर पक्षकारों की सहमति से बने मध्यस्थ के अधिदेश को समाप्त करने और स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति करने में सही था?

11. समझौते की शर्तों से हटकर, क्या प्रतिवादी मध्यस्थता अधिनियम की धारा 11 के तहत मध्यस्थता याचिका दायर करने में सही थाः–

यह स्वीकार किया जाता है कि दोनों पक्षों ने जयपुर, जोधपुर में अंतर्देशीय कंटेनर डिपो और बंदरगाहों के बीच आईएसओ कंटेनरों और माल के सड़क परिवहन के संचालन के लिए 28.01.2000 को एक समझौता किया था। यह समझौता 10.4.2000 से तीन वर्ष की अवधि के लिए लागू होना था। उपरोक्त समझौते को 31.01.2003 से दो वर्ष की अवधि के लिए और बढ़ा दिया गया था। अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) की धारा 4.20.1 में मध्यस्थता के लिए प्रावधान किया गया है, जो इस प्रकार हैः–

> "4.20.1 इस संविदा से उत्पन्न होने वाले या इससे किसी भी तरह से जुड़े सभी विवादों और मतभेदों को एकमात्र मध्यस्थता के लिए स्वयं प्रबंध निदेशक को या उनके द्वारा नामित व्यक्तियों को संदर्भित किया जाएगा। ऐसी किसी भी

नियुक्ति पर इस आधार पर कोई आपत्ति नहीं होगी कि इस प्रकार नियुक्त व्यक्ति निगम का कर्मचारी है, उसने उन मामलों को निपटाया है जिनसे अनुबंध संबंधित है और यह कि अपने कर्तव्यों के दौरान।इस तरह से मध्यस्थता अंतिम होगी और अनुबंध के पक्षकारों के लिए बाध्यकारी होगी। यदि वह व्यक्ति, जिसके पास मामला मूल रूप से मध्यस्थता के लिए भेजा गया था, कार्यालय के खाली होने, स्थानांतरण, इस्तीफे, सेवाओं से सेवानिवृत्ति, निलंबन या किसी अन्य कारण से काम करने में असमर्थ हो जाता है, तो प्रबंध निदेशक उसके कार्य को जल्द से जल्द संभालने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को नामित करेगा। ऐसा व्यक्ति उस प्रक्रम से आगे बढ़ेगा जहां मामला उसके पूर्ववर्ती द्वारा छोड़ा गया था। मध्यस्थ अधिनिर्णय के लिए कारण बताएगा।"

12. बिंदुओं को समझने के लिए, प्रत्यर्थी–ठेकेदार द्वारा उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने से पहले मध्यस्थ के समक्ष विभिन्न कार्यवाहियों के ब्यौरे का उल्लेख करना आवश्यक है। खंड 4.20.1 के संदर्भ में आई सी श्रीवास्तव, आईएएस (सेवानिवृत्त) को दिनांक 21.02.2005 के आदेश द्वारा एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया था। चूंकि उक्त मध्यस्थ के समक्ष मध्यस्थता की कार्यवाही की प्रगति संतोषजनक नहीं थी, इसलिए दिनांक 26.03.2009 के आदेश संख्या आरएसआईसी/ लीगल/ 08–09/ 23999–24001 द्वारा आई सी श्रीवास्तव, आईएएस (सेवानिवृत्त) की मध्यस्थ के रूप में नियुक्ति वापस ले ली गई। उक्त मध्यस्थ से रिकॉर्ड प्राप्त नहीं हुए थे, इसलिए दोनों पक्षों की उपस्थिति में 13.08.2009 को एक आदेश पारित किया गया था, जिसमें इस बात पर सहमति

व्यक्त की गई थी कि मामले के रिकॉर्ड का पुनर्निर्माण किया जाना है और इसी आदेश द्वारा, अतिरिक्त मुख्य सचिव (एसएसआई), रुक्मणी हल्दिया, आईएएस से एकमात्र मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए अनुरोध करने का निर्णय लिया गया था। हालांकि, बाद में दोनों पक्षों की सहमति से अपीलकर्ता–निगम के अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक को एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया था।

13. यह मामला 24.11.2009 और 30.11.2009 और अन्य तारीखों को मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष स्थगित कर दिया गया था। मध्यस्थ न्यायाधिकरण के दिनांक 08.01.2010 के आदेश से पता चलता है कि पहले के मध्यस्थ से कई बार अनुरोध किया गया था कि वह मामले से संबंधित रिकॉर्ड सौंप दे, लेकिन उसने रिकॉर्ड नहीं सौंपे और इसलिए, पक्षकारों को रिकॉर्ड का आदान–प्रदान करने की सलाह दी गई ताकि कार्यवाही शुरू हो सके और मामले को स्थगित कर दिया गया। 25.1.2010 को बाद की सुनवाई में दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व उनके वकील ने किया और इसलिए मामले को अंतिम बहस के लिए 8.2.2010 तक स्थगित कर दिया गया। 8.2.2010 को प्रतिवादी–दावेदार की दलीलों के एक हिस्से को सुना गया और समय की कमी के कारण मामले को 10.02.2010 तक स्थगित कर दिया गया। बाद में 10.02.2010, 11.02.2010, 15.02.2010, 18.02.2010 और 10.03.2010 को प्रतिवादी–दावेदार की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं था और मामला 17.03.2010 तक स्थगित कर दिया गया। प्रत्यर्थी–ठेकेदार ने अपीलकर्ता–निगम के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक को संबोधित अपने दिनांक 16.03.2010 के पत्र द्वारा मध्यस्थता की निष्पक्षता पर संदेह व्यक्त करते हुए एकमात्र मध्यस्थ से मध्यस्थता को वापस लेने की अपनी इच्छा व्यक्त की और मामले का अभिनिर्णय पिछले मध्यस्थ आई. सी. श्रीवास्तव से करवाने के लिए तैयार था जिन्हें दोनों पक्षकारों की संयुक्त सहमति से पहले ही हटा दिया गया था।

पत्र दिनांकित 18.03.2010 द्वारा, प्रत्यर्थी ने मामले को स्थगित करने का अनुरोध किया। सुनवाई की अगली तारीख 19 मार्च, 2010 को प्रत्यर्थी–ठेकेदार पेश नहीं हुआ और मामले को 06.04.2010 तक स्थगित कर दिया गया। 06.04.2010 को प्रत्यर्थी–ठेकेदार अपने प्रतिनिधि एफ. के. शेरवानी द्वारा पेश हुआ।जैसा कि 06.04.2010 की मध्यस्थ की कार्यवाही से पता चलता है, हालांकि शुरू में अपीलकर्ता–आरएसआईसी के बाहर से मध्यस्थ के लिए दबाव डाला था, आखिरकार अपनी सहमति दे दी कि अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक मध्यस्थता कर सकते हैं।

14. 29.04.2010 को मामले पर विचार नहीं किया जा सका क्योंकि 28.04.2010 को मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने यह कहते हुए आदेश पारित किया कि एकमात्र मध्यस्थ–सीएमडी को बहुत महत्वपूर्ण आधिकारिक कार्य में भाग लेने के लिए मुंबई जाना होगा और मामले को 19.05.2010 तक स्थगित कर दिया गया। इसके बाद यह मामला 20.05.2010, 16.06.2010, 25.08.2010 और 21.10.2010 तक स्थगित कर दिया गया। यह देखा गया है कि प्रत्यर्थी–दावेदार ने (दिनांक 21.10.2010 के पत्र द्वारा) कहा कि उन्हें वर्तमान एकमात्र मध्यस्थ में पूरा विश्वास है और यह कि मामले को जल्द से जल्द रिकॉर्ड पर उपलब्ध तथ्यों के आधार पर जल्द तय किया जाये।

15. पक्षकारों के रेकॉर्ड और कतिपय स्पष्टीकरणों के मिलान के अभाव में, दिनांक 24.03.2011 के आदेश द्वारा, मध्यस्थ ने दोनों पक्षकारों को दावे और प्रतिदावे से संबंधित पूर्ण रेकॉर्ड के साथ 18.04.2011 को उनके समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया। अगली सुनवाई की तिथियों अर्थात 20.04.2011 और 21.04.2011 को, पक्षकारों और एकमात्र मध्यस्थ के बीच विस्तृत चर्चा हुई और तदनुसार, प्रत्यर्थी–ठेकेदार कुछ दावों को वापस लेने के लिए सहमत हुए। दिनांक 21.04.2011,

18.05.2011, 20.05.2011 और 24.05.2011 के विभिन्न पत्राचार द्वारा, मध्यस्थ को निर्णय को अंतिम रूप देने के लिए दोनों पक्षों से कुछ स्पष्टीकरण की आवश्यकता थी और जवाब भी प्राप्त हुए थे।17.08.2011 को, दोनों पक्षों की उपस्थिति में, मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने निम्नलिखित आदेश पारित कियाः– –

> "इस मध्यस्थता से संबंधित पत्रावली से छेड़छाड़/दस्तावेज़ गायब या अधूरी प्रतीत होती है।इसलिए, कालानुक्रमिक घटनाओं का पता लगाने और पुनर्निर्माण की आवश्यकता होगी।इस संबंध में दोनों पक्षों को सूचित करते हुए विस्तृत आदेश पारित किया जाएगा। उन्हें इस विषय में अगले आदेश तक इंतजार करना चाहिए।"

16. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, प्रत्यर्थी–ठेकेदार ने दिनांक 07.02.2013 को एक कानूनी नोटिस भेजा जिसमें कहा गया था कि दोनों पक्षों ने 18.04.2011 को एकमात्र मध्यस्थ के समक्ष अपने प्रासंगिक दावे प्रस्तुत किए हैं और यह कि कुछ राशि की कटौती के बाद दावे को निपटाने के लिए पारस्परिक रूप से सहमति व्यक्त की गई थी और इस राशि को अंतिम रूप से 3,90,81,602/– रुपये पर निर्धारित किया गया था और इस तथ्य के बावजूद कि पक्षकारों के बीच तय राशि पर सहमति थी, मध्यस्थ द्वारा कोई पंचाट पारित नहीं किया गया। प्रतिवादी ने सांविधिक ब्याज के साथ 3,90,81,602 रुपये के दावे को दोहराते हुए दिनांक 07.03.2013 को एक और कानूनी नोटिस भेजा। अपीलकर्ता–निगम ने 19.03.2013 को एक विस्तृत जवाब भेजा है, जिसमें किसी भी तरह के समझौते से इनकार किया गया है और इस बात से भी इनकार किया गया है कि 3,90,81,602/– रुपये की राशि को अंतिम रूप दिया गया था।

17. उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, 13.05.2015 को प्रत्यर्थी–ठेकेदार ने 28.01.2000 के समझौते के संबंध में अपीलकर्ता–निगम और प्रत्यर्थी–ठेकेदार के बीच विवादों और मतभेदों के न्यायनिर्णयन के लिए एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 और धारा 15 के तहत एक आवेदन दायर किया। जब उक्त याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित थी, तब मध्यस्थ ने दिनांक 18.12.2015 के आदेश द्वारा सुनवाई की तारीख 05.01.2016 निर्धारित की। प्रतिवादी–ठेकेदार ने माध्यस्थम की कार्यवाही को स्थगित रखने का अनुरोध करते हुए एक पत्र भेजा। हालांकि, मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने मामले को 13.01.2016 और उसके बाद 21.01.2016 के लिए स्थगित कर दिया, जिस तारीख को मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा अंतिम पंचाट पारित किया गया था। इसके बाद, उच्च न्यायालय के 22.04.2016 के आक्षेपित आदेश द्वारा सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश श्री जे. पी. बंसल को दोनों पक्षों के बीच विवाद को हल करने के लिए एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया था।

18. जैसा कि पहले बताया गया है, 06.04.2010 को, हालांकि प्रत्यर्थी ने शुरू में आरएसआईसी के बाहर मध्यस्थ की मांग की, फिर अंत में मध्यस्थता के लिए प्रबंध निदेशक के लिए अपनी सहमति दी। दिनांक 06.04.2010 की उक्त कार्यवाही इस प्रकार हैः– –

> "श्री एफ. के. शेरवानी दावेदार की ओर से और श्री जी. सी. गर्ग और श्री आर. के. अग्रवाल, अधिवक्ता निगम की ओर से उपस्थित हुए। आरंभ में श्री एफ. के. शेरवानी ने आरएसआईसी के बाहर से एक मध्यस्थ नियुक्त करने पर जोर दिया। उनकी आशंका थी कि सीएमडी एक स्वतंत्र मध्यस्थ नहीं होंगे क्योंकि उनके आरएसआईसी के हित को

ध्यान में रखने की संभावना है। ऐसा निगम द्वारा सामना की जा रही वित्तीय कठिनाइयों के कारण होगा।

श्री एफ़ के शेरवानी को बताया गया कि सैद्धांतिक रूप से हस्ताक्षरित समझौते में निगम के अध्यक्ष या प्रबंध निदेशक या उनके द्वारा नामित व्यक्ति द्वारा मध्यस्थता का प्रावधान है और दोनों पक्षों के संयुक्त अनुरोध पर पहले के मध्यस्थ से मध्यस्थता को वापस ले लिया गया था। विचार–विमर्श के बाद यह निर्णय लिया गया कि सीएमडी विवाद का निपटारा कर सकते हैं। श्री शेरवानी ने अपनी सहमति भी दे दी है कि सीएमडी मध्यस्थता कर सकते हैं।

सुनवाई की तारीख 29.04.2010 को अपराह्न 3 बजे निर्धारित की गई है।"

19. जैसा कि 21.10.2010 के आदेश से देखा गया है, प्रतिवादी ने कहा कि "वे मामले को आगे नहीं बढ़ाना चाहते हैं और उन्हें वर्तमान एकमात्र मध्यस्थ में पूरा विश्वास है और वे चाहते हैं कि एकमात्र मध्यस्थ मामले का फैसला करे और जल्द से जल्द रिकॉर्ड पर उपलब्ध दलीलों और तथ्यों के आधार पर निर्णय पारित करे। जैसा कि इससे पहले बताया गया है, इस आशय से, श्री राम बी. साल्वे, प्रत्यर्थी के एकमात्र मालिक ने भी 21.10.2010 को एक पत्र दिया था। चूंकि दस्तावेज गायब या अधूरे थे, इसलिए दोनों पक्षों की उपस्थिति में, मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने 17.08.2011 को अपने आदेश के माध्यम से फैसला किया है कि कालानुक्रमिक घटनाओं का पता लगाने की आवश्यकता है और पुनर्निर्माण की आवश्यकता होगी और दोनों पक्षों को सूचित करते हुए एक विस्तृत आदेश पारित किया जाएगा। जैसा

कि उस समय तक मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही से देखा गया, प्रतिवादी ने स्वेच्छा से भाग लिया और मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष कार्यवाही में सहमति व्यक्त की और एकमात्र मध्यस्थ में विश्वास व्यक्त किया। इस प्रकार, स्वेच्छा से माध्यस्थम की कार्यवाही में भाग लेने के बाद, प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी–निगम को दिनांक 07.02.2013 का एक कानूनी नोटिस भेजा, जिसमें कहा गया है कि माध्यस्थम की कार्यवाही में, प्रत्यर्थी ने दावे परस्पर सहमति व्यक्त की और 3,90,81,602/– रुपये की राशि के लिए मामले का निपटारा किया गया और बार–बार अनुरोध करने के बावजूद, प्रत्यर्थी को राशि का भुगतान नहीं किया गया। प्रतिवादी ने 3,90,81,602/– रुपये के भुगतान की अपनी मांग दोहराते हुए दिनांक 07.03.2013 को एक और कानूनी नोटिस भी भेजा। इसके जवाब में, अपीलार्थी–निगम ने दिनांक 19.03.2013 को एक विस्तृत उत्तर भेजा है।

20. इस पृष्ठभूमि में, प्रत्यर्थी ने एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 और धारा 15 के तहत 13.05.2015 को उच्च न्यायालय के समक्ष मध्यस्थता याचिका दायर की है।जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) की धारा 4.20.1 के अनुसार पक्षकार इस बात पर सहमत कि अनुबंध से संबन्धित या उससे उत्पन्न होने वाले सभी विवाद और मतभेद एकमात्र मध्यस्थता के लिए स्वयं प्रबंध निदेशक या उनके नामित व्यक्तियों को संदर्भित किए जाएंगे और यह कि ऐसी किसी नियुक्ति पर इस आधार पर कोई आपत्ति नहीं है कि इस प्रकार नियुक्त व्यक्ति निगम का कर्मचारी है और उसने उस मामले पर कार्रवाई की है जिससे संविदा संबंधित है।जब पक्षकार जानबूझकर इस बात पर सहमत हो जाते हैं कि विवादों या मतभेदों को एकमात्र मध्यस्थता के लिए स्वयं प्रबंध निदेशक या उनके द्वारा नामित व्यक्ति को संदर्भित किया जाएगा और काफी समय से मध्यस्थ के समक्ष मध्यस्थता की कार्यवाही में भाग

लेने के बाद, प्रत्यर्थी पीछे नहीं हट सकता है और एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग नहीं कर सकता है।

21. प्रतिवादी ने काफी समय से मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष कार्यवाही में भाग लिया है और एकमात्र मध्यस्थ में विश्वास व्यक्त किया है, इसलिए अपीलकर्ता–निगम के प्रबंध निदेशक की एक मात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्ति को चुनौती देना उचित नहीं है। इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन लिमिटेड और अन्य बनाम राजा ट्रांसपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड (2009) 8 एससीसी 520 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में निर्णय दिया:–

> "**34**. यह तथ्य कि नामित मध्यस्थ पक्षकारों में से एक का कर्मचारी है, यह उसके प्रति पूर्वाग्रह या पक्षपात या अपनी ओर से स्वतंत्रता की कमी की धारणा को बढ़ाने का एक वास्तविक आधार नहीं है। तथापि, किसी कर्मचारी मध्यस्थ की स्वतंत्रता या निष्पक्षता के बारे में न्यायोचित आशंका हो सकती है, यदि ऐसा व्यक्ति प्राशनगत संविदा के संबंध में नियंत्रक या सम्बन्धित प्राधिकारी था या यदि वह उस अधिकारी के प्रत्यक्ष अधीनस्थ (जो कि किसी अन्य विभाग में अवर रैंक के अधिकारी से अलग है) जिसका निर्णय विवाद का विषय है।
>
> 44. इस प्रश्न पर विचार करते समय कि क्या किसी नामित मध्यस्थ को संदर्भित करने के लिए समझौते में विहित माध्यस्थम प्रक्रिया को नजरअंदाज किया जा सकता है, यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि अधिनियम की धारा 34

की उप–धारा (2) के धारा (v) को भी ध्यान में रखा जाए जिसमें यह प्रावधान है कि न्यायालय द्वारा कोई माध्यस्थम पंचाट रद्द किया जा सकता है यदि मध्यस्थ न्यायाधिकरण संरचना या माध्यस्थम प्रक्रिया पक्षकारों के करार के अनुसार नहीं हो (जब तक कि ऐसा करार अधिनियम के भाग 1 के किसी उपबंध के विरोध में नहीं हो जिसका पक्षकार अवहेलना नहीं कर सकते, या, ऐसे करार को असफल करना अधिनियम के भाग 1 के उपबंधों के अनुसार नहीं था)। विधायी आशय यह है कि पक्षों को मध्यस्थता समझौते की शर्तों का पालन करना करना चाहिए। [रेखांकित किया गया]"

22. प्रत्यर्थी ने यह दिखाने के लिए कोई तथ्य नहीं रखा है कि उसके पास यह मानने का कारण है कि मध्यस्थ ने स्वतंत्र या निष्पक्ष रूप से कार्य नहीं किया था। प्रत्यर्थी ने इस आशंका को ग्रहण करने के लिए ऐसे किसी भी तथ्य को रिकॉर्ड पर नहीं रखा है कि अपीलार्थी–निगम के प्रबंध निदेशक के स्वतंत्र या निष्पक्ष रूप से कार्य करने की संभावना नहीं है। दूसरी ओर, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, माध्यस्थम न्यायाधिकरण की कार्यवाही दिनांकित 21.10.2010 के अनुसार, प्रत्यर्थी ने एकमात्र मध्यस्थ में अपना पूरा विश्वास व्यक्त किया था और इस आशय का पत्र 21.10.2010 दिनांकित भी दिया था। यह तथ्य कि एकमात्र मध्यस्थ अपीलकर्ता–निगम का प्रबंध निदेशक है, उसकी प्रति पूर्वाग्रह या उसकी तरफ से स्वतंत्रता की कमी की धारणा को बढ़ाने का एक आधार नहीं है। माध्यस्थम् खंड अनुसूची–4 (सामान्य शर्तें) की धारा 4.20.1 एक उच्च अधिकारी का निर्धारण करता है अर्थात निगम के प्रबंध निदेशक जो ठेका या प्रतिवादी द्वारा निष्पादित कार्य से कोई संबंध नहीं रखते है। पूरी मध्यस्थता की कार्यवाही में भाग लेने और

कार्यवाही में सहमत होने के बाद, प्रतिवादी को मध्यस्थ की क्षमता को चुनौती देने से वंचित किया जाता है। प्रत्यर्थी द्वारा एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग करते हुए मध्यस्थता याचिका दाखिल करना उचित नहीं था।

क्या संशोधन अधिनियम की धारा 12 के आधार पर, प्रबंध निदेशक कार्य करने के लिए अपात्र हो गया है:–

23. मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 2015 में संशोधन के बाद, खंड 12 (5) एक पक्षकार के कर्मचारी को मध्यस्थ बनने से प्रतिबंधित करती है।वर्तमान मामले में, पक्षकारों के बीच समझौता 28.01.2000 को किया गया था और मध्यस्थता की कार्यवाही बहुत पहले 2009 में शुरू हुई थी और इस प्रकार, प्रतिवादी मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की धारा 12 (5) का उपयोग नहीं कर सकता है। अधिनियम की धारा 26 के अनुसार, संशोधित अधिनियम 2015 के प्रावधान इस अधिनियम के लागू होने से पहले मूल अधिनियम की खंड 21 के प्रावधानों के अनुसार शुरू की गई मध्यस्थता की कार्यवाही पर तब तक लागू नहीं होंगे जब तक कि पक्षकार अन्यथा सहमत न हों।

24. भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड बनाम कोच्चि क्रिकेट प्राइवेट लिमिटेड और अन्य, (2018) 6 एससीसी 287 में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि संशोधन अधिनियम, 2015 (23.10.2015 से प्रभावी) के प्रावधानों का पहले से शुरू हो चुकी मध्यस्थता कार्यवाहियों में पूर्वव्यापी संचालन नहीं हो सकता है जब तक कि पक्षकार अन्यथा सहमत न हों। वर्तमान मामले में, यह सुझाव देने के लिए कोई आधार नहीं है कि पक्षकार इस बात पर सहमत हो गए हैं कि नए अधिनियम के प्रावधान मध्यस्थता की कार्यवाही के संबंध में लागू होंगे।

25. यह तर्क देते हुए कि एकमात्र मध्यस्थ/अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक, 2015 के संशोधन के आधार पर, मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए अपात्र हो गया है, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने टीआरएफ लिमिटेड बनाम एनेर्जो इंजीनियरिंग प्रोजेक्ट्स लिमिटेड (2017) 8 एससीसी 377 पर निर्भरता व्यक्त की है। उक्त मामले में, हालांकि समझौता/खरीद आदेश दिनांक 10.05.2014 (संशोधन से पहले) था, मध्यस्थता को लागू करने के लिए नोटिस 28.12.2015 को (संशोधन अधिनियम 2015 के बाद) जारी किया गया था और मध्यस्थ को नामित करने के लिए प्रबंध निदेशक का पत्र दिनांक 27.01.2016 का है। मामले के इस तरह के तथ्यात्मक मैट्रिक्स में, इस न्यायालय ने निर्णय दिया है कि प्रतिवादी का नामित मध्यस्थ–प्रबंध निदेशक कानूनी रूप से अयोग्य हो गया था और इसलिए, वह किसी अन्य व्यक्ति को मध्यस्थ के रूप में नामित नहीं कर सकता है। अनुछेद

> "**54.** में, यह निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गया:– –
>
> ऐसे संदर्भ में, विवाद का आधार यह हो सकता है की प्रबंध निदेशक जो की एक अपात्र मध्यस्थ हैं, एक ऐसे मध्यस्थ की नियुक्ति कर सकते हैं जो अन्यथा पात्र और एक सम्मानित व्यक्ति है। जैसा कि पहले कहा गया है, हम न तो निष्पक्षतावाद और न ही व्यक्तिगत सम्मान से चिंतित हैं। हमारा सरोकार केवल प्रबंध निदेशक के अधिकार या शक्ति से है। हमारे विश्लेषण के अनुसार, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए बाध्य हैं कि एक बार जब मध्यस्थ कानूनी रूप से अयोग्य हो जाता है, तो वह एक अन्य मध्यस्थ को नामित नहीं कर सकता है।मध्यस्थ अधिनियम की धारा 12 (5) में

निहित नियम के अनुसार अयोग्य हो जाता है। यह कानून में अकल्पनीय है कि कोई व्यक्ति जो कानूनी रूप से अयोग्य है, वह किसी व्यक्ति को नामित कर सकता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि एक बार बुनियादी ढांचा ढहने के बाद, अधिरचना ढहने के लिए बाध्य है। बिना स्तंभ के कोई इमारत नहीं हो सकती। या इसे अलग तरह से कहने के लिए, एक बार एकमात्र मध्यस्थ के रूप में प्रबंध निदेशक की शक्ति समाप्त हो जाती है तो किसी और को मध्यस्थ के रूप में नामित करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया विचार धारणीय नहीं है और ऐसा हम कहते हैं। [रेखांकित किया गया]"

26. उक्त मामले के तथ्य हाथ में लिए गए मामले से पूरी तरह से भिन्न हैं। उक्त मामले में, 28.12.2015 को जब मध्यस्थता का आह्वान करने वाला नोटिस जारी किया गया था, तो 23.10.2015 से संशोधन अधिनियम, 2015 लागू होने के बाद, जिसके आधार पर समझौते में नामित व्यक्ति मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए अयोग्य हो गया था।इस मामले में, मध्यस्थता की कार्यवाही 2015 के संशोधन अधिनियम के लागू होने से बहुत पहले 2009 में शुरू हुई थी और इसलिए, 2015 संशोधन अधिनियम इस मामले में लागू नहीं है।इस मामले को शासित करने वाले वैधानिक प्रावधान वे हैं जो संशोधन अधिनियम से पहले लागू थे।

27. अपने दृष्टिकोण को मजबूत करने के लिए, हम अरावली पावर कंपनी प्राइवेट लिमिटेड बनाम एरा इन्फ्रा इंजीनियरिंग लिमिटेड (2017) 15 एससीसी 32 में अदालत के इस निर्णय का उपयोग कर सकते हैं। इस मामले में, मध्यस्थता का आह्वान 29.07.2015 को किया गया था और मध्यस्थ की नियुक्ति 19.08.2015

को की गई थी और पक्षकार 23.10.2015 से काफी पहले यानी जिस तारीख को संशोधन अधिनियम लागू माना गया था, 07.10.2015 को मध्यस्थ के समक्ष उपस्थित हुए थे। यह माना गया कि इस विवाद को नियंत्रित करने वाले वैधानिक प्रावधान वे हैं जो संशोधन अधिनियम से पहले लागू थे। इसलिए इस न्यायालय ने निर्देश दिया है कि मध्यस्थता, 19.08.2015 को मध्यस्थ की नियुक्ति के अनुसरण में, कानून के अनुसार आगे बढ़ेगी।

क्या उच्च न्यायालय करार के अनुसार नियुक्त मध्यस्थ के अधिदेश को समाप्त करने में सही थाः– –

28. विचार के लिए मुख्य सवाल यह है कि क्या उच्च न्यायालय समझौते के अनुसार नियुक्त मध्यस्थ के आदेश को समाप्त करने और मध्यस्थता अधिनियम की धारा 11 (6) और धारा 15 के तहत दायर आवेदन में एक स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति करने में सही था। प्रत्यर्थी ने 07.02.2013 को अपीलकर्ता को 3.90,81,602/– रुपये का भुगतान करने के लिए कानूनी नोटिस जारी किया, यह आरोप लगाते हुए कि उक्त राशि मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष कार्यवाही के दौरान तय की गई थी। मांग को दोहराते हुए, प्रत्यर्थी ने 07.03.2013 को फिर से कानूनी नोटिस भेजा है.लेकिन कोई पुरस्कार नहीं दिया गया।प्रत्यर्थी ने अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी के बीच विवादों और मतभेदों के न्यायनिर्णयन के लिए एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति की मांग करते हुए 13.05.2015 को 1996 के अधिनियम की धारा 11 और 15 के तहत आवेदन दाखिल किया.

29. अपने तर्क के समर्थन में, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भारत संघ और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य पुल निगम लिमिटेड (2015) 2 एससीसी 52 के निर्णय पर भरोसा किया। प्रत्यर्थी के विद्वत वकील ने प्रतिवाद किया कि मध्यस्थ चार

साल के बाद भी कार्यवाही को समाप्त करने में विफल रहा और उच्च न्यायालय ने पक्षकारों के बीच समझौते में मध्यस्थता खंड से हटकर स्थानापन्न मध्यस्थ को उचित रूप से नियुक्त किया। कथित मामले में, चूंकि मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने चार साल की अवधि समाप्त होने के बावजूद पंचाट पारित नहीं किया, इसलिए प्रतिवादी ने अनुरोध वाद संख्या 10/2010 दायर किया और उच्च न्यायालय ने 9.03.2011 को आदेश पारित किया जिसमें मध्यस्थ न्यायाधिकरण को तीन महीने की अवधि के भीतर मध्यस्थता की कार्यवाही को पूरा करने का अंतिम मौका दिया गया। फैसले के अनुछेद (6) में, इस न्यायालय ने बताया कि उच्च न्यायालय ने 25.03.2011 और 25.06.2011 के बीच न्यायाधिकरण द्वारा तय की गई विभिन्न तारीखों और सुनवाई पर ध्यान दिया और निष्कर्ष निकाला कि मध्यस्थता की कार्यवाही में हुई देरी जानबूझकर की गई थी। इसके बाद भारत संघ बनाम सिंह बिल्डर्स सिंडिकेट (2009) 4 एससीसी 523 और अन्य फैसलों में के संदर्भ में इस न्यायालय ने कहा कि मध्यस्थ न्यायाधिकरण में देरी और बार–बार होने वाले परिवर्तन मध्यस्थता की प्रक्रिया को विफल करते हैं और इसलिए, मध्यस्थता खंड से अलग अदालत द्वारा अपनी पसंद के मध्यस्थ की नियुक्ति कानून की एक स्वीकार्य प्रस्ताव बन गई है जिसे कानूनी सिद्धांत कहा जा सकता है जो इस न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला द्वारा स्थापित किया गया है। उक्त मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह देखते हुए कि माध्यस्थम कार्यवाहियों में विलंब जानबूझकर किया गया था,

उत्तर प्रदेश राज्य पुल निगम लिमिटेड के अनुछेद (6) के अनुसार, निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गयाः–

> "**6.** उच्च न्यायालय ने अधिकरण द्वारा 25–3–2011 और 25–6–2011 के बीच तय की गई सुनवाई की विभिन्न तारीखों पर ध्यान दिया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि

मध्यस्थता की कार्यवाही में जानबूझकर देरी की गई थी। इतना ही नहीं, मध्यस्थ न्यायाधिकरण के सदस्य 2007 से मामले को निपटाने में देरी करने की रणनीति अपना रहे थे और इस प्रक्रिया में चार साल बीत चुके थे। अधिकरण को तीन महीने के भीतर मामले को समाप्त करने के लिए विशिष्ट निर्देश देने के बाद भी चूक गया और लंबे स्थगन दिए गए थे, जिससे उच्च न्यायालय के विशिष्ट निर्देशों का उल्लंघन हुआ। अधिकरण के सदस्यों के इस रवैये को किसी भी कानून के लिए या उच्च न्यायालय के आदेशों के लिए कोई गंभीरता नहीं होने के साथ अपने कर्तव्यों के प्रति लापरवाही बरतने के लिए, उच्च न्यायालय ने यहां प्रत्यर्थी की याचिका को अनुमति दी और स्वयं न्यायालय द्वारा एकमात्र मध्यस्थ की नियुक्ति के साथ न्यायाधिकरण के आदेश को रद्द कर दिया।"

30. वर्तमान मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स को ध्यान में रखते हुए, हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, कथित निर्णय का अनुपात वर्तमान मामले पर लागू नहीं किया जा सकता है। इसके विपरीत, वर्तमान मामले में, मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही 17.08.2011 तक जारी रही। मध्यस्थ न्यायाधिकरण की दिनांक 17.08.2011 की कार्यवाही से यह देखा गया है कि, "मध्यस्थ ने कहा कि मध्यस्थता से संबंधित पत्रावली से छेड़छाड़/दस्तावेज़ गायब या अधूरी प्रतीत होती है और इसलिए, कालानुक्रमिक घटनाओं का पता लगाने और पुनर्निर्माण की आवश्यकता होगी।"

इस पृष्ठभूमि में पंचाट 2013 तक पारित नहीं किया गया था। यह सही है कि पंचाट देने में कुछ देरी हुई।

हालांकि, 2011 और 2013 के बीच, प्रत्यर्थी ने कार्यवाही में तेजी लाने और पंचाट पारित करने के लिए कोई आवेदन दायर नहीं किया है।प्रत्यर्थी ने न तो शीघ्र निर्णय पारित करने के लिए अनुरोध मामला दायर किया है और न ही मध्यस्थता के अधिदेश की समाप्ति के लिए अधिनियम की खंड 14 के तहत याचिका दायर की है कि मध्यस्थ 'बिना अनावश्यक विलंब के कार्य करने में विफल रहा है'.

31. पक्षकारों द्वारा सहमत शर्तों से हटकर किसी अन्य मध्यस्थ को नियुक्त करने का आधार केवल किसी मध्यस्थ द्वारा कार्य करने में लापरवाही या पंचाट को पारित करने में विलंब नहीं हो सकता है। हम उपयोगी रूप से **रसेल ऑन आर्बिट्रेशन के 20 वें संस्करण** का संदर्भ ले सकते हैं जो इस प्रकार हैः

> "केवल एक मध्यस्थ की कार्य करने की उपेक्षा, इनकार या असमर्थता से अलग है, और अपने आप में अदालत को उसके स्थान पर किसी अन्य मध्यस्थ को नियुक्त करने की शक्ति नहीं देता है। हालाँकि, यह अदालत को उसे हटाने की शक्ति देता है, जहाँ उसे बदलने की शक्ति होती है।**[रसेल ऑन आर्बिट्रेशन के 20 वें संस्करण , पृष्ठ 136, मध्यस्थता और सुलह से संबंधित कानून में उद्धृत, 9 वां संस्करण, द्वारा डॉ. पी.सी. मार्कण्डा पृष्ठ 620]**

32. खंड 15 अधिदेश की समाप्ति और मध्यस्थ के प्रतिस्थापन से संबंधित है।खंड 15 के उप–खंड (1) में कहा गया है कि अधिनियम की खंड 13 और 14 में उल्लिखित परिस्थितियों के अलावा, किसी मध्यस्थ का अधिदेश समाप्त हो जाएगा जहां वह किसी भी कारण से या पार्टियों के समझौते के अनुसार कार्यालय हट जाता है। उप–धारा (2) के संदर्भ में, मध्यस्थ के अधिदेश की समाप्ति के बाद, स्थानापन्न

मध्यस्थ की नियुक्ति उस मध्यस्थ की नियुक्ति पर लागू नियमों के अनुसार होगी जिसे प्रतिस्थापित किया जा रहा है।

33. **एस. एस. बी. पी. और कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और एक अन्य (2009) 10 एस. सी. सी. 293** में धारा 11, 14 और 15 के प्रयोजन के विश्लेषण के पश्चात् इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि विधानमंडल ने मध्यस्थों की नियुक्ति के मामले में पक्षकारों के बीच करार की शर्तों और ऐसी नियुक्ति के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के पालन की आवश्यकता पर बार–बार जोर दिया है।पैरा (31) में, यह निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गयाः–

> **"31.** यहां तक कि स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति को विनियमित करने वाली खंड 15 (2) में यह अपेक्षा की गई है कि ऐसी नियुक्ति उन नियमों के अनुसार की जाएगी जो मूल मध्यस्थ की नियुक्ति पर लागू होते हैं। इस उपधारा में प्रयुक्त 'नियम' शब्द सांविधिक नियमों या प्रत्यायोजित विधान की शक्ति का प्रयोग करते हुए सक्षम प्राधिकारी द्वारा बनाए गए नियमों तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें पक्षकारों के बीच किए गए करार के निबंधन भी शामिल हैं।"

34. यशविद कंस्ट्रक्शन्स (पी) लिमिटेड बनाम सिंप्लेक्स कंक्रीट पाइल्स इंडिया लिमिटेड और एक अन्य (2006) 6 एससीसी 204, में उच्चतम न्यायालय से अधिनियम की खंड 15 के दायरे की इस तथ्य की पृष्ठभूमि में जांच करने के लिए निवेदन किया गया था कि प्रत्यर्थी कंपनी के प्रबंध निदेशक द्वारा नियुक्त मध्यस्थ के इस्तीफे के बाद, उसके द्वारा मध्यस्थता समझौते के अनुसार एक और मध्यस्थ नियुक्त किया गया था। उस स्तर पर, याचिकाकर्ता ने अधिनियम की खंड 11(5)

के साथ पठित खंड 15(2) के तहत एक आवेदन दाखिल किया, जिसमें अनुरोध किया गया कि पक्षकारों के बीच विवाद को समाप्त करने के लिए स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति करें । उक्त आवेदन को मुख्य न्यायाधीश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया गया था कि खंड 15 (2) न केवल मध्यस्थों की नियुक्ति को विनियमित करने के लिए बनाए गए कानूनी नियमों का उल्लेख करती है बल्कि ऐसी नियुक्ति के लिए संविदात्मक प्रावधानों का भी उल्लेख करती है जो मुख्य न्यायाधीश द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को बरकरार रखते हैं। अनुछेद (4) में, यह निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गयाः–

> "4.....किसी भी कारण से किसी मध्यस्थ को कार्यालय से हटाना अधिनियम की खंड 15 (1) (ए) के दायरे में है। इसलिए, खंड 15 (2) के अनुसार बदले जाने वाले मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए लागू नियमों के अनुसार एक स्थानापन्न मध्यस्थ नियुक्त की जाएगी । इसलिए, जो धारा 15(2) का प्रावधान है वह यह है की प्रतिस्थापित मध्यस्थ की नियुक्ति या मध्यस्थ की जगह किसी अन्य की प्रतिस्थापना मूल मध्यस्थ की नियुक्ति पर लागू होने वाले नियमों के अनुसार है।
>
> धारा 15(2) में शब्द "नियम" स्पष्ट रूप से मध्यस्थता समझौते में निहित नियुक्ति के प्रावधान को संदर्भित करता है या किसी संस्थान का कोई नियम जिसके तहत विवादों को मध्यस्थता के लिए भेजा गया था। मध्यस्थता समझौते के अनुसार संबंधित पक्ष की ओर से अधिनियम की धारा 11 के संदर्भ में अपने दायित्व को पूरा करने में ऐसी कोई विफलता नहीं थी की एक स्थानापन्न मध्यस्थनियुक्ति के लिए

अधिनियम की धारा 11(6) के तहत मुख्य न्यायाधीश के अधिकार क्षेत्र को आकर्षित किया जाये। जाहिर है, अधिनियम की खंड 11 (6) केवल तभी लागू होती है जब कोई पक्ष या संबंधित व्यक्ति मध्यस्थता समझौते के संदर्भ में कार्य करने में विफल रहा हो।जब खंड 15 (2) कहता है कि स्थानापन्न मध्यस्थ को उन नियमों के अनुसार नियुक्त किया जा सकता है जो मूल रूप से मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए लागू थे, तो यह किसी भी वैधानिक नियम या किसी अधिनियम या योजना के तहत बनाए गए किसी भी नियम तक सीमित नहीं है। इसका मतलब केवल यह है कि स्थानापन्न मध्यस्थ की नियुक्ति मूल समझौते या प्रारंभिक चरण में मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए लागू प्रावधान के अनुसार की जानी चाहिए। [रेखांकित किया गया]"

जैसा कि यशविद कंस्ट्रक्शंस में अभिनिर्धारित किया गया है, अधिनियम की खंड 11 (6) केवल तभी लागू होगी जब संबंधित पक्ष की ओर से मध्यस्थता समझौते के संदर्भ में एक मध्यस्थ नियुक्त करने में विफलता होगी। इस मामले में, हमारे विचार में, पक्षकारों के बीच समझौते की शर्तों को ध्यान में रखे बिना उच्च न्यायालय द्वारा एक स्वतंत्र मध्यस्थ की नियुक्ति सही नहीं है, इसलिए स्वतंत्र मध्यस्थ/सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश की नियुक्ति का आदेश उचित नहीं है।

35. प्रतिवादी–ठेकेदार के लिए उपाय – विचार के लिए अगला प्रश्न यह है की क्या मध्यस्थ द्वारा पारित किया गया पंचाट दिनांकित 21.01. 2016 उचित है? जैसा कि पहले चर्चा की गई थी, 17.08.2011 के बाद मध्यस्थ न्यायाधिकरण प्रगति नहीं कर सका और 17.08.2011 को मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही के अनुसार,

मध्यस्थ ने कहा कि "... ...गायब कागजात अधूरे हैं अधूरा... ... कालानुक्रमिक घटनाओं का पता लगाने की जरूरत है और पुनर्गठन की आवश्यकता होगी..."। जैसा कि पहले बताया गया है, प्रत्यर्थी ने 13. 05. 2015 को उच्च न्यायालय के समक्ष 1996 के अधिनियम की धारा 11 और 15 के तहत आवेदन दाखिल किया। दिनांक 18.12.2015 की मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही के अनुसार, उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत मध्यस्थता आवेदन को न्यायाधिकरण के संज्ञान में लाया गया और इसे दर्ज किया गया। 05–01–2016 को, प्रतिवादी ने प्रास्थगन की कार्यवाही को स्थगित रखने के लिए प्रार्थना की और मामले को 13.01.2016 के लिए स्थगित कर दिया गया।मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने 13.01.2016 को एक विस्तृत आदेश पारित किया जिसमें कहा गया था कि यह मामला कुछ समय से लंबित है और उपलब्ध तथ्यों और दलीलों के आधार पर, मामलों को अंतिम रूप दिया जाएगा और मामले को 21.01.2016 के लिए स्थगित कर दिया।

उपलब्ध तथ्यों के आधार पर, मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने 21.01.2016 को दावेदार के दावों के संबंध में क्रम संख्या 3,4 और 9 में क्रमशः 1,38,000/– रुपये, 83,000/– रुपये और 1,97,110/– रुपये की राशि प्रदान करते हुए अंतिम पंचाट पारित किया और अन्य दावों के संबंध में प्रतिवादी के दावों को खारिज कर दिया।जहां तक क्रम संख्या 17 के संबंध में अपीलार्थी–निगम के प्रति–दावे का संबंध है, मध्यस्थ ने रु. 58,39,018/– की राशि अधिनिर्णीत की।

36. चूंकि उच्च न्यायालय मामले की सुनवाई कर रहा था, इसलिए मध्यस्थ न्यायाधिकरण प्रत्यर्थी को अपना मामला रखने के लिए और अवसर दे सकता था। मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही 2009 से 2015 तक काफी समय से लंबित थी और प्रत्यर्थी द्वारा मई, 2015 में उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के बाद, ऐसा प्रतीत होता है कि मध्यस्थ ने जल्दबाजी में पंचाट पारित कर दिया था। यह

ध्यान देने योग्य है कि प्रत्यर्थी बार–बार 05.01.2016, 13.01.2016 को स्थगन के लिए प्रार्थना कर रहा था और 21.01.2016 को अंतिम पंचाट के पारित होने की तारीख पर उपस्थित नहीं था। जैसा कि पहले बताया गया है, 17.08.2011 की कार्यवाही में यह उल्लेख किया गया था कि कालानुक्रमिक घटनाओं का पता लगाने की आवश्यकता है और पुनर्निर्माण की आवश्यकता होगी।यह ज्ञात नहीं है कि 21.01.2016 को अंतिम अधिनिर्णय पारित करने से पहले इसका पता लगाया गया था या नहीं और क्या पुनर्निर्माण किया गया था?

प्रतिवादी ने विभिन्न शीर्षों के तहत कई दावे किए हैं। प्रतिवादी को विभिन्न शीर्षों के तहत अपने दावे को साबित करने का अवसर दिया जाना चाहिए। पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए और भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए दिनांक 21.01.2016 के अधिनिर्णय को रद्द किया जाना है।

37. भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए, यह न्यायालय के लिए खुला है कि वह पक्षकारों के हितों की रक्षा करके राहत प्रदान करे। ऐसे मामलों में सर्वोपरि ध्यान यह सुनिश्चित करने पर होना चाहिए कि कोई अन्याय न हो। राज कुमार और अन्य बनाम भारत संघ और एक अन्य (2006) 1 एससीसी 737 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में निर्णय दिया:– –

> "19....संविधान के खंड 142 के तहत हमारी शक्तियों का उपयोग करते हुए, कार्मिकों के एक वर्ग को पूर्ण न्याय दिलाने के लिए, जिन्हें अन्यथा एक अन्यायपूर्ण स्थिति में रखा जाएगा, जिसके लिए प्राधिकारी भी आंशिक रूप से दोषी हैं। यह न्यायालय के लिए खुला है कि वह कानून की घोषणा

करते समय भी पक्षकारों के हितों की रक्षा करके राहत प्रदान कर सकता है। ऐसे मामलों में सर्वोपरि ध्यान यह सुनिश्चित करने पर होना चाहिए कि कोई अन्याय न हो।"

38. अनुच्छेद 142 (1) में संलग्न "पूर्ण न्याय" वाक्यांश लोच से आच्छादित विस्तृत अर्थ वाला शब्द है जो मानवीय बुद्धिमत्ता द्वारा बनने वाली असंख्य स्थितियों में उपयोग के लिए और या संविधान के अनुच्छेद 32, 136 और 141 के तहत घोषित संविधि कानून या कानून के संचालन के परिणाम से उत्पन्न हुई है।

संविधान.(देखें – अशोक कुमार गुप्ता और अन्य बनाम यू. पी. राज्य और अन्य (1997) 5 एस. सी. सी. 201) वर्तमान मामले में, अधिनियम की खंड 34 के तहत पंचाट को चुनौती देने के लिए प्रत्यर्थी को कहना, पक्षकारों के बीच मुकदमेबाजी को और अधिक बढ़ाएगा। मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए और पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए, संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का उपयोग करते हुए, 21.01.2016 के अधिनिर्णय को रद्द किया जाता है।

39. इसके परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय के दिनांक 22.04.2016 के आक्षेपित आदेश को रद्द कर दिया जाता है और यह अपील स्वीकार की जाती है।अपीलकर्ता– राजस्थान लघु उद्योग निगम लिमिटेड का वर्तमान प्रबंध निदेशक एकमात्र मध्यस्थ होगा और प्रबंध निदेशक को मामले को लेने और कार्यवाही जारी रखने और दोनों पक्षों को आगे सबूत पेश करने और मौखिक प्रस्तुतियां देने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करके चार महीने की अवधि के भीतर अंतिम निर्णय पारित करने का निर्देश दिया जाता है। यह स्पष्ट किया जाता है कि मध्यस्थ उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किसी भी विचार से प्रभावित न हो।

न्यायाधीश [आर. बानुमथि]

न्यायाधीश [इंदिरा बनर्जी]

नई दिल्ली।

23 जनवरी, 2019

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय वादी के प्रतिबंधित उपयोग के लिए उसकी भाषा में समझाने के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।